20वीं शताब्दी के अंतिम दशक की महिला रचनाकारों को कहानियों में नारी–विद्रोह

डॉ गीता कुमारी
सहायक प्रोफेसर (गेस्ट फेकेल्टी हिंदी विभाग)
आर. एन. कॉलेज हाजीपुर
बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय
मुजफ्फरपुर बिहार

बीसवीं शताब्दी से पहले तक महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर, उनके सशक्तिकरण, उनकी उपलब्धियों और संघर्षों पर, उनके रचे साहित्य और अवधारणाओं पर गम्भीरता से चर्चा नहीं की जाती थी। महिला लेखन को बहुत सम्माननीय दर्जा प्राप्त नहीं था और जो दो–चार महिलाएँ रचनाएँ करती भी थीं, उन्हें घर के सीमित दायरे की सीमित समस्याओं के घेरे में रचा–लेखन मानकर या घर पर बैठी 'सुखी महिलाओं का लेखन' मानकर या तो गंभीरता से नहीं लिया जाता था या एक आरक्षित रियासत दे दी जाती थी कि आखिर तो इनका दायरा छोटा है, परिवेश सीमित है तो बड़े पफलक क मुद्दे कैसे उठायेंगी।

स्त्रियों पर जो भी चर्चाएँ हुई, वे पुरुषों ने कीं, चाहे वह सामाजिक सरोकारों के मद्देनजर हो या सहानुभूति से। स्त्राी चरित्राों को लेकर पुरुष रचनाकारों का एक अपना नजरिया और अपना आकलन था। प्रेमचंद, अज्ञेय, जैनेन्द्र ने बेहद जीवन्त स्त्राी पात्रा अपने उपन्यासों, कहानियों में रचे। ज्योतिबा पफुले, महात्मा गाँधी, राममनोहर लोहिया, बाबासाहेब आंबेडकर के स्त्राी सम्बन्धी सरोकारों से सभी परिचित हैं। पर यह स्थिति पिछले दो दशकों से विश्व के हर क्षेत्रा में देखी जा रही हैं कि स्त्रियाँ अपने बारे में स्वयं अपने को विषय बना कर चर्चा कर रही हैं, अपनी समस्याओं से जुड़े विषय अपनी तरह से उठा रही हैं।

जब नारीवाद नारे और आंदोलन के रूप में चर्चित नहीं था, तब भी नारीवादी लेखन किया गया है। रुकैया सखावत हसन की कहानी 'सुलताना का सपना' देखें। बंग महिला, सुमित्राकुमारी सिन्हा, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की कहानियों के बाद महादेवी वर्मा की 'श्रृंखला की कड़ियाँ' के आलेत्रा अभूतपूर्व हैं। उन दिनों संस्मरण विधा का भी इतना चलन नहीं था पर महादेवी जी ने अपने आलेखों में कितनी सशक्त शैली में अपने समय की स्त्राी की हर क्षेत्रा मे यातना का सटीक चित्राण किया। उसमें लछिमा का चरित्रा बहुत कुछ कह जाता है।

महादेवी स्त्राी को लेकर समय की सोंच पर या स्थितियों पर कोई बयान नहीं देती पर उसे समय से उठाए गए एक स्त्राी पात्रा का जैसा रोंगटे खड़े कर देने वाला चित्राण वह करती हैं, वह अपने आप मे एक बयान है। कृष्णा सोबती की मित्राों मरजानी, उषा प्रियंवदा की पचपन संभे और लाल दीवारें, मन्नू भंडारी की कहानियाँ, बंद दराजों का साथ, तीन निगाहों की एक तस्वीर, अकेली, नई नौकरी, स्त्राी सुबोधिनी परंपरा और विद्रोह के संधिकाल में खड़ी स्त्राी की कहानियाँ हैं।

इन कहानिया का विश्लेषण करें तो उस समय की स्त्राी की सामाजिक स्थिति को बखूबी पहचाना जा सकता है। लेकिन महिला रचनाकारों की यह त्रायी जब तक रचनारत थी, इन्हें महिला लेखन के खाँचे में नहीं डाला गया। उनकी कहानियों का जिक्र या समीक्षा मेनस्ट्रीम के रचनाकारों के साथ ही की गई।

इसके बाद जब 75 के आसपास जब महिलाओं की एक बड़ी जमात ने अपनी धाक जमानी शुरू की तो समीक्षकों के लिए कोई विकल्प नहीं रह गया क्योंकि इसे अनदेखा करना संभव नहीं था। संवेदना के स्तर पर ये रचनाएँ आश्चर्यजनक रूप से भिन्न थी और इसम मूलभूत अन्तर वही था जो एक स्त्राी और पुरुष की भावनात्मक और सोच के धरातल पर होता है।

पिछले बीस सालों में अगर कुल कहानियों के विषय का विभाजन करें तो हम पाएँगे कि सबसे ज्यादा कहानियाँ स्त्राी के मुद्दों पर ही रची गई हैं। उपन्यास के क्षेत्रा सभी समस्याओं पर लिखें गए उपन्यासों की एक बेहद उर्वरा जमीन हिन्दी के रचनात्मक साहित्य में देखी गई है। कृष्णा सोबती की 'मित्राों मरजानी' एक अक्खड़ और दबंग औरत की एकांतिक तस्वीर प्रस्तुत करती है, उषा प्रियंवदा की 'रूकोगी नहीं, राधिका', 'पचपन खंभे', 'लाल दीवारें' आर 'शेष यात्राा' में परम्परा और रूढ़ियों के द्वन्द्व में पफंसी एक आधुनिक स्त्राी की अपनी अस्मिता को ढूँढ़ने की तलाश है।

मन्नू भंडारी का उपन्यास – 'आपका बंटी' हिन्दी साहित्य में एक मील का पत्थर है, जो अपने समय से आगे की कहानी कहता है और हर समय का सच होने के कारण कालातीत भी है। शकुन के जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी यही है कि व्यक्ति और माँ के इस द्वन्द्व में वह न पूरी तरह व्यक्ति बनकर जी सकी, न पूरी तरह माँ बनकर। .....और क्या यह केवल शकुन की त्रासदी है? अपने व्यक्तित्व को पूरी तरह नकारती हुई, अपने मातृत्व के लिए सबधों के सारे नकारात्मक पक्षों को पीछे धकेलती हुई या उन्हें अनदेखा करती हुई, हिन्दुस्तान की हजारों औरतों की यही त्रासदी है।

अलग होने के बाद बच्चों की त्रासदी की कल्पना मात्रा से हिन्दुस्तान के नब्बे प्रतिशत विवाह टूटने से बचे रह जाते हैं। आपका बंटी सिपर्फ बच्चे की त्रासदी का उपन्यास नहीं है। इसमें शकुन की समस्या को भी बहुत गहराई के साथ उठाया गया है। अधिकांश भारतीय भाषाओं में अनूदित इन तीन प्रमुख बहुचर्चित रचनाकारों के बाद सन् 1980–85 के बाद हिन्दी में स्त्री विषयक उपन्यसों की जैसे बाढ़–सी आ गई।

ममता कालिया के उपन्यास 'बेघर' और 'एक पत्नी के नोट्स' में एक मध्यवर्गीय पढ़ी लिखी महिला का भी अपने पति द्वारा एक सामान्य औरत की तरह ट्रीट किया जाना और गाहे–बगाहे व्यंग्य का शिकार होना तथाकथित प्रगतिशील और पढ़े लिखे वर्ग को बेनकाब करता है। मृदुला गर्ग का 'अनित्य' जिसमें दो महत्त्वपूर्ण स्त्री पात्राों में से एक काजल एक पफेमिनिस्ट प्राध्यापक की तरह उभरती है जो अनलिखे इतिहास को दुबारा लिखना चाहती है, भगत सिंह के सि(ान्तों पर विश्वास करती है और उसे पढ़ती है हालाँ कवह उनके कोर्स में नहीं है, संगीता जो एक वेश्या की बेटी है पर अपने सि(ान्त खोती नहीं, अपनी अस्मिता के साथ खड़ी होती है।

मृदुला गर्ग का 'चितकोबरा' और 'मैं और मैं' जिसमें एक औरत और एक लेखिका के दोनों पहलुओं की कश्मकश का बड़ी बारीकी से चित्राण किया गया है। और इन सबसे बढ़कर मृदुला गर्ग का 'कठगुलाब', जिसमें स्त्रियों के इतने विभिन्न रंग रूप और शेड्स हैं कि स्त्री–विमर्श की कई अवधारणाओं की पोथी बाँची जा सकती है।

चित्राा मुद्गल का 'एक जमीन अपनी' और आवाँ जिसमें एक सामाजिक कार्यकर्ता की जमीनी के संघर्षों का पहली बार हिन्दी साहित्य में इतना सचेत और बेबाक चित्राण हुआ है। मृणाल पाण्डे का 'पटरंगपुराण' जिसे पढ़कर लगता है कि पूरा एक शहर ऐसी औरतों के नजरिए से देखा–परखा और बयान किया जा रहा है जो अपने घूँघट उलटाकर और अपनी खिड़की–झरोखे खोलकर बड़ी पैनी निगाह से कस्बे में होने वाले हर क्रिया–कलाप का जायजा ले रही है।

मेहरून्निसा परवेज का 'कोरजा', जिसमें आदिवासी परिप्रेक्ष्य में एक स्त्री की त्रासदी का वर्णन है, सूर्यबाला का 'मेरे संधि पत्रा', मंजुल भगत का 'अनारों', 'गंजी' – जिसमें पहली बार एक कामकाजी नौकरानी के रोटी–रोजी के संघर्ष के साथ–साथ उसकी ताकत और स्वाभिमान को रेखांकित किया गया है। 'खातुल' जिसमें अपने मुल्क से बेदखल हुआ किरदार मर्द का नहीं, औरत का है जिसे मुजाहिर बनाकर प्रस्तुत किया गया है। अपफगानिस्तान से भागकर आई यह शरणार्थी एक कमसिन बच्ची है।

जंग के तमाम बहशी हादसे और खौपफनाक मंजर भगतने के बाद भी वह अपना मुल्क छोड़कर भागना नहीं चाहती बल्कि उसे आजाद कराने में कुर्बान होना चाहमी है। कमल कुमार का 'यह खबर नहीं' जिसमें सत्ता और प्रभुत्वशाली वर्ग के बीच किस तरह एक प्रतिभाशाली लड़की की अस्मिता को कुचला जाता है, इसका रोमांचकारी यथार्थ वर्णन है।

नासिरा शर्मा का 'एक और शाल्मली', जिसमें घर और बाहर अपने अधिकार माँगती आजादी के बाद की उभरती एक अलग किस्म की स्वतंत्रा चेतना स्त्राी है जो पतिसे संवाद चाहती है, बराबरी का दर्जा चाहती है, प्रेम की माँग करती है जो उसका हक है। इस पात्रा आधुनिक स्त्राी के एक बहुत बड़े वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है।

नासिरा का एक और उपन्यास 'ठीकरे की मंगनी' जिसमें बचपन में बिना पैसे के लेन–देन के मंगनी हो जाती है और लड़का बड़ा होने पर शादी करने से मुकर जाता है। इस पर कद्दावर औरत टूटती नहीं, वह अपना एक घर बनाती है, वह वजूद हासिल करती है और मर्द के लौटने पर उसे दुबारा कुबूल नहीं करती।

'कुइयाँ जान', उपन्यास में पानी की समस्या केन्द्र में है पर इस समस्या से रू–ब–रू होती हैं औरतें। इस उपन्यास का सबसे खूबसूरत पहलू है कि औरतों के सामाजिक सरोकार उभरकर आते हैं और औरतें पर्यावरण के मुद्दे पर बात करती हैं। राजी सेठ का 'तत्सम' चन्द्रकांता का 'अपने अपने कोणार्क' तथा 'कथा सतीसर' गीतांजलि श्री का 'माई', जिसमें गाँव–कस्बे की एक औरत अपने बच्चों और परिवार के लिए कैसे अपने को तिल–मिल होम करती है पर उसका मिटना भी उसके बच्चों में विद्रोह की चिंगारी और अपनी रीढ़ की हड्डी सीधी रख्ने का जज्बा जगा जाता है।

प्रभा खेतान का 'पीली आँधी' तथा 'छिन्नमस्ता' जिसमें परंपरागत दकियानूसी मारवाड़ी परिवार की एक लड़की का बागी निकल आना कैसे पूरे समाज को उसके खिलापफ खड़ा कर देता है, का एक संपूर्ण दस्तावेज है। मैत्रेयी पुष्पा का बहुचर्चित उपन्यास 'इदन्नमम' तथा 'चाक' मधु काँकरिया का 'सलाम आखिरी' और 'सेज पर संस्कृत' – जिसमें जैन साध्वियों का धर्म के नाम पर शोषण दबा–छिपा उठ खड़ी होती है। अलका सरावगी का 'शेष कादम्बरी', अनामिका का 'दस द्वारे का पिंजरा' जिसमें पिछली शती की औरतों के कद्दावर होने का आज के परिप्रेक्ष्य में समूचा बयान है।

कमल कुमार का हाल ही में प्रकाशित उपन्यास 'मैं घूमर नाँचू' राजस्थान की एक बाल विधवा कृष्णा के चात्रिा को पफोकस करता हुआ स्त्राी की आजादो को स्पष्टता से रेखांकित करता है और पुरुष प्रधान सत्ता को चुनौती देता है।

नारीवादी लेखन आज के समय की जरूरत है। आधुनिकता और उदार सोच के तमाम दावों के बावजूद स्त्री की सामाजिक स्थिति या उत्थान में कोई बड़ा क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं आया है। आज भी वे समझौतों और दोहरे कार्यभार के बीच पिस रही हैं। पुरुष सत्ता की नीवें हमारे समाज में बहुत गहरे तक धँसी हुई हैं। इसे तोड़ना, बदलना या सँवारना एक लम्बी लड़ाई है। साहित्य और शिक्षा हो या लड़ रही है और स्त्रियों की पारंपरिक दासता में बदलाव लाने की कोशिश में रत हैं।

कथा–साहित्य में भी स्त्री–चेतना ने अपनी उपस्थिति पूरी गहराई और शिद्दत से दर्ज करवाई है पर हिन्दी साहित्य में तथाकथित स्त्री विमर्श और विचार इतने वौ(कि स्तर पर है कि आम औरतों तक सा उन औरतों तक, जिन्हें सचमुच जागरूक बनाने की जरूरत है, यह पहुँच ही नहीं पाता। यह काम साहित्य के स्त्री विमर्शकारों से कहीं अधिक महिला संगठन और जमीनी तौर पर उनसे जुड़ी कार्यकर्ता कर रही हैं।

सन्दर्भ–सूची :

1. औरत अपने लिए लेख – असुरक्षित स्त्राी, लता शर्मा, पृ॰सं॰–125.
2. श्रम शक्ति, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली।
3. वोमेन्स सोशल स्टेटस एण्ड पार्टिसिपेशन ऑपफ वर्क, इण्डियन काउन्सिल आपफ सोशल साइंस रिसर्च, नई दिल्ली, वर्ष 2008.
4. रानी, आशु–महिला वकास कार्यक्रम, इना श्री पब्लिकेशन, चण्डीगढ़, वर्ष 1990.
5. शरण, डी॰के॰ – भारतीय इतिहास में नारी, क्लासिकल पब्लिकेशन कम्पनी, नई दिल्ली, वर्ष–2007.
6. पाठक, पी॰डी॰–भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1988.
7. समेकित बाल विकास परियोजना
8. दैनिक जागरण, मार्च 2016.
9. दैनिक भास्कर, जुलाई 2016.
10. हिन्दुस्तान समाचार पत्रा, जनवरी 2017.
11. राष्ट्रीय कुपोषण नियन्त्राण कार्यक्रम से जुड़ी तथ्यों का अध्ययन
12. सरस सलील पत्रिाका मई 2017.
13. योजना, जुलाई 2014 एवं नवम्बर 2016.
14. डॉ॰ राम मनोहर लोहिया मार्क्स–गाँधी, यंग सोसलिज्म, सर्व सेवा संघ, न्यूज लेटर, जनवरी 1968, नई दिल्ली।
15. भारत सरकार : आर्थिक और सामाजिक समीक्षा, सूचना एवं पसारण मत्रालय, नई दिल्ली।